मृत्युदंड: बहस अभी जारी हैमृत्युदंड से संबंधित सर्वोच्च न्यायालय का नवीनतम शानदार फैसला तमाम और लोगों के साथ मध्यप्रदेश के मगन के लिए भी राहत लाया है। यह फैसला मानवाधिकार संरक्षण की दिशा में एक लंबी छलांग है। मृत्युदंड को भले ही कानूनी रूप से उचित ठहराया जाए, लेकिन क्या इसे सभ्य समाज का द्योतक माना जा सकता है? यह एक अत्यंत शांत और अहिंसक मनुष्य में थोड़ी देर के लिए ही सही पर हिंसा का भाव पैदा कर देता है। मृत्युदंड की विषाक्तता को समाप्त करने की दिशा में यह निर्णय एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा लेकिन यह फैसला अधूरा सा लगता है, क्योंकि अभी तक हमारे देश में मृत्युदंड की सजा को पूरी तरह से खत्म नहीं किया है।

न्यायालय ने कहा है कि मृत्युदंड पाए अपराधियों की दयायाचिका पर अनिश्चितकाल की देरी नहीं की जा सकती और देरी किए जाने की स्थिति में उनकी सजा को कम किया जा सकता है। इसके साथ ही शीर्ष अदालत ने 15 दोषियों की फांसी की सजा को उम्रकैद में तब्दील करने का आदेश दिया। फैसले में यह भी कहा गया है कि मृत्युदंड का सामना करने वाला कैदी यदि मानसिक रूप से अस्वस्थ है, तो भी उसे फांसी नहीं दी जा सकती और उसकी सजा कम करके आजीवन कारावास में बदल दिया जाना चाहिए। साथ ही मृत्युदंड का सामना करने वाले अपराधी और अन्य कैदियों को एकांत कारावास में रखना भी असंवैधानिक है।

इन पूरे 15 प्रकरणों में मध्यप्रदेश के सीहोर जिले के इछावर ब्लॉक के कनेरिया गांव के मगनलाल का भी एक प्रकरण था। 11 जून 2010 को मगनलाल ने अपनी पांच बेटियों को मौत के घाट उतार दिया था। 3 फ रवरी 2011 को सीहोर अदालत से उसे फांसी की सजा सुनाई थी और 22 जुलाई 2013 को रायपाल और राष्ट्रपति के यहां से भी इसकी दयायाचिका खारिज हुई और तुरत-फुरत 8 अगस्त 2013 को फांसी का दिन मुकर्रर कर दिया गया। यानी केवल तीन साल में ही प्रकरण का निपटारा हो गया। लेकिन 7 अगस्त को फांसी की सजा को लेकर दिल्ली के कुछ अधिवक्ताओं ने रात 11 बजे इस पर स्थगन लिया।

उपरोक्त फैसला त्वरित नजर आते हुए भी भारतीय न्याय प्रणाली को कटघरे में खड़ा करता है। जो व्यक्ति आर्थिक रूप से कमजोर है, जिसके पास एक अच्छा वकील खड़ा करने की हिम्मत न हो तो उसे पर्याप्त साक्ष्यों के अभाव में भी धड़धड़ाते हुए फांसी के तख्ते तक पहुंचा दिया जाता है। मगनलाल प्रकरण में यथोचित विधिक सहायता प्राप्त न हो सकी। वरना फैसले में सिर्फ बर्खास्त न कहकर तर्क भी दिए गए होते।

अमेरिका के कार्लोस डेलुना को दी गई फांसी की सजा आज भी तमाम समर्थकों के आगे एक अनुत्तरित प्रश्न बन कर खड़ी है। सन् 1983 में डेलुना सिर्फ 20 वर्ष का था, जब उसे वांडा लोपेज नाम की नौजवान महिला की हत्या के आरोप में अमेरिका के टेक्सास राय में गिरफ्तार किया गया। अदालत ने उसे दोषी पाया और मृत्युदंड सुना दिया। 8 दिसंबर 1989 को जहर की सूई लगाकर उसे मौत की नींद सुला दिया गया। मुकदमे के दौरान डेलुना और उसके वकील बार-बार कोर्ट को बताते रहे कि लोपेज की हत्या उसने नहीं, बल्कि उससे मिलते-जुलते शारीरिक गठन वाले कार्लोस हनर्ांदेंज नाम के व्यक्ति ने की है। मगर उनकी दलीलें ठुकरा दी गईं। कोलंबिया विश्वविद्यालय के कानून विभाग के एक अध्ययन से अब यह सामने आया है कि डेलुना सच बोल रहा था। यानी उसको दी गई मृत्युदंड की सजा गलत थी।

बहरहाल मगन के प्रकरण और नवीनतम फैसले ने देश में फांसी के जिन्न को फिर से बाहर निकाल दिया है। अजमल कसाब की फांसी ने इस बहस को पुन: सुलगाया था कि भारत को मृत्युदंड बरकरार रखना चाहिए या

नहीं। एमनेस्टी इंटरनेशनल के अनुसार भारत में पिछले दो दशक में केवल चार व्यक्तियों को फ ांसी दी गई है, लेकिन इस कतार में अभी चार सौ पैंतीस नाम हैं। मानवाधिकार समूहों ने भी भारत में मृत्युदंड खत्म किए जाने की मांग फि र से दोहराई है। वैसे दुनियाभर के 110 देश मृत्युदंड को नकार चुके हैं।

उच्चतम न्यायालय ने 1982 में ही कहा था कि मृत्युदंड बहुत विरल (रेअरेस्ट ऑफ रेयर) मामलों में ही दिया जाना चाहिए। मृत्युदंड के विरोध को लेकर संयुक्त राष्ट्र ने पहला प्रस्ताव सन् 2007 में पारित किया था। तब उसके पक्ष में 104 और विरोध में 54 देशों ने वोट डाले थे। इससे वैश्विक मानस स्पष्ट होता है। भारत ने इस मतदान के दौरान इस तर्क के आधार पर सजा-ए-मौत खत्म करने का विरोध किया कि हर देश को अपनी कानूनी व्यवस्था तय करने का संप्रभु अधिकार है। हम सभी इस तर्क के पक्ष में हैं लेकिन भारत को यह भी नहीं भूलना चाहिए उसने भी मानवाधिकारों के संरक्षण वाली अंतरराष्ट्रीय संधियों पर हस्ताक्षर किए हैं।

मृत्युदंड को लेकर हमारे यहां कानूनवेत्ताओं में भी बहस छिड़ी हुई है। जाने-माने वकील प्रशांत भूषण और दिल्ली उच्च न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधीश राजेन्द्र सच्चर ने मृत्युदंड को समाप्त करने की वकालत की है। भूषण ने फ ांसी की सजा को सरकार की तरफ से की गई हिंसा करार देते हुए कहा कि इससे हिंसा की प्रवृत्ति बढ़ती है। उन्होंने कहा, "दरअसल हम ऐसा मान लेते हैं कि फांसी की सजा के डर से हिंसा कम होगी, लेकिन ऐसा नहीं होता। उन्होंने कहा कि सजा का उद्देश्य सुधारात्मक होना चाहिए, न कि जीवन की इहलीला समाप्त करना।"

न्यायमूर्ति सच्चर ने भी कुछ इसी तरह के पक्ष रखे। उन्होंने कहा कि 1950 के बाद से अब तक केवल 57 अपराधियों को फांसी के फं दे पर लटकाया गया है और ऐसा नहीं कि इसे समाप्त कर देने से अपराध की घटनाओं में बढ़ोतरी होगी। उन्होंने सजा की इस पध्दति को अमानवीय करार देते हुए कहा कि दुनिया के जिन देशों ने मृत्युदंड को समाप्त करने का फैसला लिया है, वहां भी अपराध नियंत्रित हैं। जबकि वहीं जाने-माने संविधान विषेशज्ञ सुभाष कश्यप तथा आपराधिक मामलों के विषेशज्ञ वकील के. टी. एस. तुलसी ने मृत्युदंड को जारी रखने को जायज ठहराया है।

महात्मा गांधी, अम्बेडकर जैसे अनेक नेता हमेशा ही मृत्युदंड के खिलाफ रहे हैं। मृत्युदंड लोगों को सुधार का कोई भी अवसर प्रदान नहीं करता साथ ही मृत्युदंड कभी भी न्याय का पर्यायवाची नहीं हो सकता। हाल ही में गृह मंत्री सुशील कुमार शिन्दे ने एक साक्षात्कार में इस सजा के प्रावधान पर पुनर्विचार की जरूरत बताई थी। लेकिन कसाब को दी गई फांसी के सम्बन्ध में कहा था कि यह फांसी तो जनमत के आधार पर दी गई थी। उन्होंने कहा कि इस बारे में अपने गणमान्य व्यक्तियों और अंतरराष्ट्रीय समुदाय की तरफ से भारत को कई पत्र प्राप्त हुए हैं। उन्होंने कहा- कई वर्षों से इस बात में चिंतन प्रयिा चल रही है. हमें इस पर पुनर्विचार करने की जरूरत है। यह पुनर्विचार कब होगा, यह कहना कठिन है।

मगनलाल भी इस जटिल प्रयिा में फंसा था। बहरहाल देर से ही सही पर देश में मगन और उस जैसे कई लोगों की फांसी की सजा को उम्र कैद में बदले जाने की मांग ने जोर पकड़ा और इस फैसले ने मृत्युदंड को खत्म करने की दिशा में मील का पत्थर साबित होगा।

जय हिंद Human rights Foundation Of India